ISSN : 2319-8095
Progressive Research Journal
Vol.I No.I December 2012

"हरैय्या सतघरवा विकास खण्ड, जनपद बलरामपुर (उ.प्र.) में प्राकृतिक आपदा प्रबन्धन के स्थानीय स्वरूप का विश्लेषण एवं नियोजन"

अलका सिंह*
डॉ० घनश्याम पाठक**

प्रस्तावना :

किसी भी शोध विषय की उपदेयता इस तथ्य में है कि, वह मनुष्य के आर्थिक क्रिया–कलापों तथा पर्यावरणी तंत्रो में पारस्परिक क्रिया–प्रतिक्रिया के परिणामस्वरूप उत्पन्न समस्याओं के अभिनिर्धारण एवं उसके समाधान में कि सीमा तक सक्षम है। वह समस्त घटनाएं या दुर्घटनाएं जो प्राकृतिक या मानवजनित कारणों से विकासशील क्षेत्रों में घटि होती है, जिनसे अपार धन–जन की क्षति होती है, जिसके कारण मानव की सामाजिक व्यवस्था छिन्न–भिन्न त तहस–नहस हो जाती है, जिनके तीव्र होने पर मनाव समाज, पादप समुदाय एवं जन्तु–समुदाय अस्थिर हो उठ है,प्रकोप या आपदा कहलाती है। प्रकोपों की गहनता का विश्लेषण कर, उनके सुभेद्य क्षेत्र की पहचान कर वहाँ उत्पन्न होने वाले जोखिम विश्लेषण का गहन अध्ययन कर यदि प्रभावों एवं क्षतियों को न्यूनस्तर पर लिया दिया जाय तो इ ही आपदा प्रबन्धन कहते है।

शोध क्षेत्र के रूप मे उत्तर प्रदेश के बलरामपुर का सुदेर एवं सीमान्त विकास खण्ड हर्रैय्या–सतघरवा जो नेपा की अन्तर्राष्ट्रीय सीमा से सटा है व सघन वनों से आच्छादित है, वह भूकम्प, चक्रवातीय बवण्डर व तूफान, बाढ़, सूख शीतलहर, गर्मलहर (लू) धरातलीय अस्थिरता, त्वरित मृदा अपरदन, जल, मिट्टी एवं वायुमण्डल में जहरीले रसायनों व विमोचन, मानव जनसंख्या विस्फोट, जलाशयों में वनस्पतियो का तेजी से विकास एवं फैलाव, कीट समूहन, टिड्डियो फसलों पर का आक्रमण जैसी आपदाओं एवं प्रकोपों से निरन्तर संघर्ष कर रहा है। आपदाओं एवं प्रकोपों से शोध क्ष को इतनी अधिक आर्थिक क्षति उठानी पड रही है कि केन्द्र व राज्य सरकार द्वारा समय–समय पर चलायी जाने वाल विकास योजनाएं अपेक्षित व अनुकूल परिणाम देन में अक्ष्म हो गयी हैं।

विषय योजनाओं का लाभ क्षेत्र जब तक अनुकूलतम् स्तर पर प्राप्त नहीं होगा, जब तक प्रकोपों का विश्लेषण उनके सुभेद्य क्षेत्र की पहचान व जोखिम की सीमा का विश्लेषण कर आपदा तैयारी, आपदा निवारण आपदा पिरो विभिन्न आयामों व उपायों को निश्चित न कर लिया जाय। आपदा आने पर पर राहतकार्य, पुनर्वास व क्षतिपूर्ति की तुरन्त व्यवस्था कर प्रकोप या आपदा के प्रभाव को सीमित किया जा सकता है। विकास की सभी एजेंसियों का मानना है कि आपदा चेतावनी प्रणली का सम्यक विकास कर समय पर स्थानीय लोगों को सूचित करना चाहिए, ताकि आपदा से होने वाली क्षति को न्यूनस्तर पर लाना सम्भव हो सके। आपदा प्रबन्धन की इसी मूल संकल्पना को ध्यान में रखकर इस शो पत्र में वर्तमान प्राकृतिक आपदाओं का गहन विश्लेषण किया गया है एवं उसके उपरान्त प्राप्त आपदाओं के प्रबन्धन हे अनेक योजनाओं का निर्माण स्थानीय सहभागिता के आधार पर किया गया है।

अध्ययन क्षेत्र

ऐतिहासिक दृष्टिकोण से उत्तर कोशल राज्य के उप प्रदेश'गौडा' का सघन जंगलों से भरा तराई का वह विशिष्ट भूखण्ड, आज उत्तर प्रदेश के देवीपाटन मण्डल के जनपद बलरामपुर के एक विकास खण्ड हरैय्या सतघरवा के रूप में नेपाल की अन्तर्राष्ट्रीय सीमा के साथ प्रसरित है। भौगोलिक रूप से 27° 29' से 27° 52' अंक्षाश व 82° 2' से 82° 23' पूर्वी देशान्तर के बीच फैला हुआ यह विकासखण्ड 10 न्याय पंचायतों एवं 135 राजस्व गाँवो में विभक्त 599. 23 वर्ग कि०मी० क्षेत्रफल वाला है।

*शोध छात्रा, भूगोल विभाग, एम.एल.के.पी.जी. कालेज, बलरामपुर
**एसोसिएट प्रोफेसर एव विभागाध्यक्ष, भूगोल विभाग, एम.एल.के.पी.जी. कालेज, बलरामपुर

Scanned with OKEN Scanner

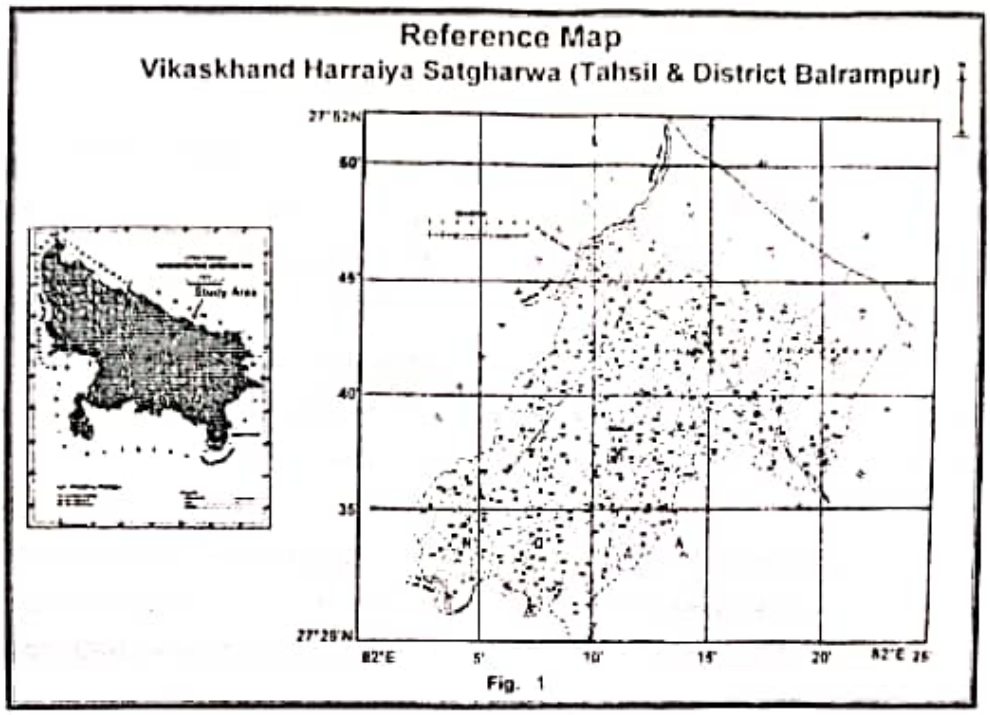

Fig. 1

अध्ययन क्षेत्र चतुर्थ जीव कल्प में हिमालय उत्पत्ति के पश्चात निर्मित अग्रगर्त (Foredeep) में अवसाद निक्षेपण से अस्तित्व में आया। 1500–3000 मीटर की गहराई में सिल्ट, गड, जलोढ़ मिट्टी, चिकना मिट्टी, महीन कण वाले बालू के विविध अनुपातों में गिलने से मध्य गंगा मैदान के सरयू पार प्लेन का यह लघु भाग संरचनात्मक रूप से निर्मित हुआ है। उच्चावचीय स्वरूप के दृष्टिकोण से यह भूभाग समुद्रतल से 140 मीटर से 160 मीटर ऊँचाई वाला भू भाग है, जिसकी ऊँचाई क्रमशः दक्षिण से उत्तर की तरफ बढ़ती जाती है। राप्ती, बूढ़ी राप्ती, पेरा, झारझार जमघरा, कछनी, हथियाकुण्ड, यहाँ की प्रमुख नदियाँ है। अध्ययन क्षेत्र में उपोष्ण मानसूनी जलवायु पायी जाती है, जो हिमालय की निकटता के कारण मध्य गंगा के मैदान से थोड़ी भिन्न है। सम्पूर्ण क्षेत्र विभिन्न ऋतुओं के आवर्तन एवं उसी के अनुरूप मानसूनी पवनों का उत्क्रमण झेलता रहता है। यहाँ का न्यूनतम तापमान औसत रूप से जनवरी का 15.6 सेल्सियस तथा अधिकतम मई का औसतम तापमान 32.8 सेल्सियस रहता है। गर्मतर जलवायु यहाँ की विशेषता है।

खादर व बांगर मिट्टी रंग, सघनता, बनावट, रन्ध्रता, आर्द्रता धारण क्षमता व रचना मे स्थानीय भिन्नता के साथ यहाँ वर्तमान है। अध्ययन क्षेत्र में 33.02 प्रतिशत भाग पर सघन वन आज भी साल, शीशम, सगौना, खैर , हाल्दू, जामुन, असैना, झाऊ के वृक्षों के साथ उपस्थित हैं। खनिज संसाधनों का यहाँ पूर्णतया अभाव पाया जाता है।

वर्तमान प्राकृतिक आपदाओं का विश्लेषण :

प्राकृतिक या मानव जनित कारणों से उत्पन्न घटनाएं या दुर्घटनाएं जो कभी–कभी घटित होती है तथा प्राकृतिक क्रियाओं की परिणाम होती हैं, इसीलिए इन्हें अलग–अलग नामों से सम्बोधित किया जाता है, यथा :–

(क) प्राकृतिक चरम घटना :–

भूकम्पीय घटना, ज्वालामुखी विस्फोट, वायुमण्डलीय तूफान, बाढ़, सूखा, भूस्खलन इत्यादि।

(ख) मानवजनित चरम घटना :–

नाभिकीय विस्फोट, नागकीय युद्ध, जहरीली गैसों का रिसाव।

प्राकृतिक चरम घटना को ही पार्थिव प्रकोप कहा जाता है। मानव अधिवास के लिए गठित संयुक्त राष्ट्रसंघ आयोग के अनुसार प्रकोप ऐसी भौतिक घटनाएं होती है, जिनसे, रिहायशी क्षेत्रों में धन–जन की अपार क्षति होती है। सामाजिक

Scanned with OKEN Scanner

व आर्थिक विध्वंस, पर्यावरण अवनयन इसकी नियति होती है।

प्रकोप की विशेषताएं निम्न होती है :–

(i) पार्थिव प्रकोप भौतिक घटनाओं की प्रतिफल होती है।

(ii) प्रकोप की गति तीव्र व त्वरित होती है।

(iii) प्रकोप में मानव, जन्तु व पादप समुदाय को अपार क्षति पहुँचाने की सम्भावना होती है।

(iv) प्रकोप यदि निर्जन क्षेत्र में उद्‌भवित होती है तो वह मात्र चरम घटना बन कर रह जाता है।

(v) प्रकोप यदि रिहायशी क्षेत्रों में आता है तो वह आपदा के नाम से जाना जाता है।

प्राकृतिक आपदा :

"उन प्रकृतिजन्य अप्रत्याशित एवं भयंकर दुष्प्रभाव वाली चरम घटना या प्राकृतिक प्रकोप को आपदा क
जिनके द्वारा मानव अपार क्षति होती है।"[5] आपदाओं की विशेषता निम्न है :–

(i) आपदायें पर्यावरणीय प्रकोपों का परिणाम होती हैं।

(ii) आपदायें रिहायशी क्षेत्रों में ही घटी घटना होती हैं।

(iii) आपदाओं का ऑकलन मानवजीवन एवं उसकी सम्पत्ति को होने वाली क्षति के सन्दर्भ में किया जात

(iv) आपदाओं के परिणाम एवं प्रचण्डता का निर्धारण मानव समाज को होने वाली क्षति के आधार पर हो

(v) आपदायें ऐसी बेलगाम घटना होती है, जिनसे मानव का सामाजिक ढाँचा छिन्न–भिन्न एवं तहस–न
जाता है।

(vi) आपदाओं द्वारा कई प्रकार की सामाजिक, आर्थिक, मानसिक एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्यायें उत्पन्न हो

प्राकृतिक आपदाओं के न्यूनीकरण एवं प्रबन्धन के प्रमुख घटक :

आपदा न्यूनीकरण एवं प्रबन्धन की प्रक्रियाओं में निम्न तत्वों को सम्मिलित किया जाता है :–

(1) संघटन तत्व :–

(i) प्रकोपों का विश्लेषण

(ii) सुभेद्यता का परीक्षण

(iii) जोखिम विश्लेषण

(2) अवस्थायें :– आपदाओं की पूर्व अवस्था

(a) आपदा की तैयारी

(b) आपदा निवारण

(c) आपदा विरोध

(ii) **आपदा उपरान्त की अवस्था :–**

(a) राहत कार्य

(b) पुर्नवास

(c) आपदा क्षतिपूर्ति

(3) आपदा चेतावनी प्रणाली :

उपरोक्त तत्वों के विशद् विश्लेषण के उपरान्त यह पाया गया कि शोध क्षेत्र विकासखण्ड हरैया स
उत्तरी गंगा के सरयूपार प्लेन का ऐसा तराई वाला हिस्सा है, जो शिवालिक की जलहटी में भाभरलैण्ड एवं संप
सें आच्छादित, तीव्र ढाल भू–भाग है। यह क्षेत्र निम्न पार्थिव आपदाओं से वर्षभर संघर्ष करता रहता है :–

(i) माध्यम तीव्रता वाली तूफानी आपदा

(ii) चक्रवातीय तूफानी आपदा

(iii) आकाशीय विद्युत आपदा

(iv) उपलावृष्टि आपदा

(v) बाढ़ आपदा

(vi) सूखा आपदा

(vii) शीत लहर आपदा

(viii) गर्म लहर आपदा

Scanned with OKEN Scanner

(ix) त्वरित मृदा अपरदन (x) वनों में लगने वाली दावाग्नि आपदा

(xi) जहरीले रासायनों का मिट्टी, जल एवं वायुमण्डल में विगोचन

(xii) जलाशयों में वनस्पति का तेजी से विकास एवं फैलाव

(xiii) कीट समूहन

शोध क्षेत्र के सापेक्ष्य में प्राकृतिक आपदाओं का विवरण निम्न है :–

(i) भूकम्पीय आपदा :

प्लायोसिन एवं प्लीस्टोसीन युग मे निर्मित धरातल का यह भूखण्ड अभी अस्थिर ही है। जैसे ही आन्तरिक भाग मे तापीय दशाओ में परिवर्तन होता है या निर्वतनिक घटनाएं प्रारम्भ होती है या अर्थक्रस्ट में किसी कारण से असंतुलन आता है, भूकम्प के झटके यहाँ के लोगों को महसूस होने लगते हैं। यह भाग शिवालिक के साथ तराई एवं भाभर वाला है, अतः यह मण्डल चार के अन्तर्गत उच्च क्षति जोखिम वाला भूकम्पीय भाग है। यहाँ समय–समय पर भूकम्प के झटकों ने धरातलीय सतह में विरूपण, भवन, रेल, सड़क, बाँध, कारखाना को क्षति पहुँचाते हुये मानव व जन्तुओं की मृत्यु, भीषण अग्नि काण्ड, बाढ़, जलभरों में व्यवधान एवं अव्यवस्था को उत्पन्न कर देता है। 05 जनवरी 1934 को यहाँ भी 8.4 परिणाम भीषण भूकम्प आया था, जिसमें भूस्खलन धरातलीय सतह में फटन तथा भ्रंसन की क्रियायें हुई थी। 21 जनवरी 1988 को 6.5 एवं 2011 में हल्के स्केल के भूकम्प के झटके इस क्षेत्र में आये।

(ii) वायु मण्डलीय आपदा :–

सम्पूर्ण शोध क्षेत्र में कहीं न कहीं प्रतिवर्ष चक्रवातीय तूफान, आकाशी विद्युत का गिरना या ओलों के रूप में उपलवृष्टि जैसी आपदा आती रही है, जिसमें कभी–कभी हवाएं 200 किमी० प्रति घण्टे की गति वाली होती है, जिससे घरों की छतें तक उखड़ जाती हैं, वनस्पतियाँ जड़ सहित उखड़ जाती हैं। उपलावृष्टि में एक निश्चित क्षेत्र में ओलों के गिरने के कारण कृषिगत सम्पूर्ण फसलें नष्ट हो जाती है।

(iii) बाढ़ आपदा :–

यह एक ऐसा प्राकृतिक घटना है, जिसमें अतिजल वर्षा के कारण नदियों के किनारे क्षेत्र में विस्तृत स्थलीय भाग कई दिनों तक जलमग्न रहता है। लम्बी अवधि तक उच्च तीव्रता वाली जलवर्षा नदियों के विसर्पित मार्ग, ढाल भंग, पुलों एवं जलभण्डारों का निर्माण ही यहाँ के बाढ के प्रमुख कारक हैं। तराई का यह भूभाग जो मुख्य रूप से राप्ती एवं उसकी सहायक अनेक नदी–नालों के साथ वर्तमान हैं, जून से सितम्बर तक प्रतिवर्ष एक या दो बार अवश्य बाढ़ का दर्शन करता है।

(iv) सूखा प्रकोप तथा आपदा :

यह अत्यधिक घातक प्रकोप पूरे शोध क्षेत्र के लिए है, क्योंकि इसमें जल की कमी पड़ जाती है। इसके कारण पेयजल कृषि एवं वनस्पतियों को सर्वाधिक नुकसान होता है। कुछ पौधें एवं जन्तू तो सूखे को बर्दाश्त नहीं कर पाते हैं आहार में कमी के कारण अव्यवस्था मानव व जन्तुओं में बढ़ जाती है। चूँकि उपोष्ण मानसूनी जलवायु का यह भाग है, जहाँ वर्षा अत्यधिक भ्रामक, अनियमित एवं अनिश्चित होती है, अतः यह भाग हर वर्ष किसी न किसी रूप में बाढ़ या सूखे से प्रभावित होता ही रहता है। सूखा पड़ने पर आकाल या दुर्भिक्ष की स्थिति शोध क्षेत्र में बन जाती है। जलतल बहुत नीचे चला जाता है। पेयजल के लिए पूरे क्षेत्र में हाहाकार मच जाता है।

(v) शीतलहर, गर्मलहर व दावाग्नि आपदा :–

शोध क्षेत्र में दिसम्बर एवं जनवरी के महीने में अत्यधिक ठण्डी शीतलहर चलती है, तो मई–जून में अत्यधिक गर्म लू के रूप में चलती है, जिससे वनस्पति, मानव व पादप समुदाय सभी इस आपदा से प्रभावित होते है। यह हर वर्ष चलने वाली स्थाई प्राकृतिक आपदा है। मई जून में अत्यधिक गर्मी के कारण वनों में स्वतः भीषण आग लग जाती

Scanned with OKEN Scanner

जिससे अत्यधिक वन–विनाश होता है, इसे दावाग्नि आपदा कहते हैं, इसका सर्वाधिक प्रभाव पशुओं, पक्षियों एवं प
समुदाय को झेलना पड़ता है।

(vi) त्वरित मृदा अपरदन :–

शोध क्षेत्र में नदी–नालों का जाल फैला हुआ है, जिसके कारण बाढ़ के दिनों में नदियों की तीव्रगामी ध
अपने किनारों को खड़ा काटते हुए चलती हैं, जिससे काफी नुकसान होता है।

(vii) जहरीले रसायनों का विमोचन :

शोध क्षेत्र में किसान अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए रासायनिक उर्वरक, कीटनाशी, शैवनाशी
शाकनाशी, कृत्रिम रसायनों का अधिकाधिक उपयोग कर रहा है, जिसके कारण मिट्टी में, जल में एवं वायु मण्ड
क्लोराइड, सल्फर, कार्बोनेट, अमोनिया, नाइट्रोजन, नाइट्रेस, पारा, शीसा, जस्ता, ताँबा, कार्बनिक रसायन की
पेस्टीसाइड्स, इनसेक्टीसाइड्स, हर्बीसाइड्स, घुलते जा रहे हैं, जो मानव, जानवर व पादप समुदाय सभी के
अस्वास्थ्यकर वातावरण का सृजन कर रहे हैं, तथा उन्हें भयंकर क्षति पहुँचा रहे है।

(vii) जलाशयों में वनस्पतियों का तेजी से विकास एवं फैलाव व कीट समूहन :

शोध क्षेत्र समतर जलवायु के कारण बहुत अधिक छोटे–बड़े तालाबों, जलाशयों एवं झीलों से भरा हुआ
जिनमें बहुत जलकुम्भी फैलकर जल की निर्मलता एवं उसकी उपयोगिता को नष्ट कर के आपदा का सृजन कर
है। इसी प्रकार क्षेत्र कभी–कभी लाखों की संख्या में टिड्डियों का समूह फसलों पर आक्रमण कर रहा है। यह एक अ
आपदा का रूप ग्रहण कर रहा है।

प्राकृतिक आपदा प्रबन्ध हेतु नियोजन :

किसी भी क्षेत्र की प्राकृतिक आपदाओं के न्यूनीकरण एवं सरल प्रबन्धन के लिए वहाँ के सभी प्रकोपों
आपदाओं का उनके पूर्व इतिहास एवं भविष्य में उनके घटित होने की सम्भावनाओं के साथ उनका सम्यक विश्ले
आवश्यक होता है। आपदा की आवृत्ति, उसकी तीव्रता, घटित होने की अवधि उसकी प्रकृति एवं उत्पन्न होने की प्रक्रि
का सही ऑकलन कर, यदि कोई योजना निर्मित होगी, तभी वह सफल होगी। प्रकोप विश्लेषण के अन्तर्गत इन्ही त
की व्याख्या की जाती है।

आपदा सुभेद्यता के अन्तर्गत इस तथ्य का विश्लेषण होता है कि किसी निश्चित इकाई में क्या दुर्बलता
जिसके कारण आपदा आती है एवं लोग उससे ग्रसित एवं दुष्प्रभावित होते हैं। यह एक स्थैतिक प्रक्रिया न होकर
गतिक प्रक्रिया होती है, जो किसी आपदा द्वारा होने वाली क्षति के प्रक्रिया की सम्भाव्यता में परिवर्तन करती रहती
इसके अन्तर्गत आपदा का नाम स्थानीय इकाई, सुभेद्य समुदाय, प्रकोप की गति, आपदा की अवधि, भौतिक संरचना
के पदार्थों की प्रतिरोधात्मक का समुचित विश्लेषण करके ही सफल योजनाएं निर्मित की जा सकती है। सी०जे० ह
के अनुसार समाज के सभी पक्ष जैसे सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, मनोवैज्ञानिक एवं स्वास्थ्य आदि पर किसी आप
का पड़ने वाला प्रभाव ही आपदा जोखम कहलाती है। आपदा जोखिम के अन्तर्गत उसका अभिनिर्धारण, ऑकलन, म
I, सूचना, बचाव, निवारण का गहन विवेचनकर जो योजना निर्मित होगी, वहीं अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकेगी।

शोध क्षेत्र का गाँव–गाँव सर्वेक्षण करने के उपरान्त ज्ञात आपदाओं की सुभेद्यता एवं जोखिम का सम्य
विश्लेषण कर हर आपदा के लिए अलग–अलग सुझाव दिये गये है :–

(1) भूकम्पीय आपदा हेतु योजना :–

(i) भूकम्पीय जोखिम क्षेत्र में मानव अधिवास से बचना चाहिए।
(ii) भवन निर्माण भूकम्परोधी डिजाइन पर ही होना चाहिए।
(iii) गगनचुम्बी इमारतों के निर्माण पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगना चाहिए
(iv) पूरे शोध क्षेत्र में भूमिगत जल का नियंत्रित विदोहन होना चाहिए, ताकि सतह के नीचे कोटरों का निर्माण
हो सके।

Scanned with OKEN Scanner

भूकम्प आने की स्थिति में सभी को सुरक्षा के उपायों से परिचित होना चाहिए।
बड़ी नदियों पर जलाशयों एवं बाँधों का निर्माण नहीं होना चाहिए।
भूकम्पीय क्षेत्रों में वनों की कटाई एवं खनन पर रोक लगनी चाहिए।
आपदा चेतावनी प्रणाली का विकास कर आपदा आने के पूर्व चेतावनी प्रसरित होना चाहिए।
हर सामुदायिक केन्द्रों पर समय–समय पर हर स्थानीय व्यक्ति को इससे बचाव का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।

बाढ़ आपदा हेतु नियोजन :–

मूसलाधार जल वृष्टि से उत्पन्न वाही जल को मुख्यनदियों तक पहुँचने में विलम्ब लगाने के दृष्टिकोण से जलग्रहण में व्यापक वनीकरण करना चाहिए, ताकि बाढ से बचा जा सके।
विसर्पी नदियों के मेड़ों को समाप्त कर नदी मार्ग को सीधा करना चाहिए। ताकि जल का त्वरित विर्सजन हो सके।
नदियों के मार्ग में बड़े जलाशयों का निर्माणकर जल के आयतन को कमकर बाढ़ से बचा जाना चाहिए।
बाढ दिक्परिर्वतन प्रणाली की व्यवस्था करके भी बाढ़ से बचा जाना चाहिए।
नदियों के किनारे पर बाँध, बाढ की सम्भावनाओं, तटबन्ध, डाइक आदि का निर्माण करके जल फैलने से रोककर बाढ़ की सम्भावनाओं से बचा जाना चाहिए।
बाढ़ चेतावनी संदेश को समय रहते प्रिंट मीडिया, इलेक्ट्रानिक माध्यमों, समाचार पत्रों द्वारा लोगों तक पहुँचाने पर बाढ़ आपदा के नुकसान को कम किया जाना चाहिए।

सूखा प्रकोप तथा आपदा हेतु उपाय :

अधिकाधिक वनारोपड़ करके वायु नमी की मात्रा को बढाकार सूखा आपदा से बचा जा सकता है।
जल भण्डारों कूपों का अधिकाधिक निर्माण करके इस आपदा के प्रभाव को कम किया जा सकता है।
इस आपदा से बचने हेतु क्षेत्र में अनाज एवं चारे का भरपूर संरक्षण पहले से होना चाहिए।

दावाग्नि हेतु नियोजन :–

लकड़ी एवं जंगल काटने वालों के लिए बीड़ी–सिगरेट व माचिस पर पूर्ण प्रतिबन्ध होना चाहिए।
वृक्षों से वृक्षों की दूरी अधिक होनी चहिए, ताकि वे एक–दूसरे से रगड़ न खा सकें।
समय–समय पर वनों से वृक्षों की चयनात्मक कटाई होनी चाहिए।
एक निश्चित दूरी पर जंगलों के बीच फायर स्टेशन होना चाहए।

जहरीले रसायनों के प्रभाव से बचाव हेतु नियोजन :

जहरीले रसायन चाहे मिट्टी में मिल रहा हो या जल में या वायुमण्डल में इसके प्रारम्भिक सोत पर ही कड़ा नियंत्रण होना चाहिए।
किसान कीटनाशी दवाओं को कम से कम प्रयोग करें, ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए।
उद्योग धन्धों वाले स्थान पर प्रदूषण नियंत्रण इकाई स्थापित होनी चाहिए, ताकि ये वहीं फिल्टर हो सकें, ये जल, मिट्टी या वायु गण्डल में प्रवेश नहीं कर सकें।
सरकारें कडे कानून बनाकर इसे नियंत्रित कर सकती है।
स्थानीय लोगों को इसके दुष्प्रभाव से परिचित कराने की व्यवस्था स्थानीय स्तर पर होनी चाहिए।

जलाशयों में फैल रही वनस्पतियों एवं टिड्डी दलों के सफाये हेतु नियोजन :

ऐसी सभी जलाशयों में फैली जलकुम्भी को प्रत्येक वर्ष निकाला जाना चाहिए, जिससे इनका प्रसार आगे न बढ़ सके।
निकाली गयी जलकुम्भियों को तुरन्त जला दिया जाना चाहिए, ताकि इनका जलाशय में प्रवेश न हो सके।

Scanned with OKEN Scanner

(iii) फसलों पर अचानक टिड्डी दलों के हमलों को रोकने हेतु सरकारी स्तर पर पूर्ण व्यवस्था होनी च

(iv) स्थानीय लोगों को समय रहते इन खतरों से आग्रह किया जाना चहिए।

Reference

(1) Adam. W. M. (2001) : Green Development - Environment and Sustain ability in t world. - Routledge, London.

(2) Barrow, C. J. (2005) : Environmental Management and Development. Routledge London.

(3) Botbin, D. B. And Keller, E.S. (1982) : Environment studies C. E. Merill Publishing Company, A and Hawell Company Columbus.

(4) Cole, M. (1971) : Plants, Animal and Environment, Geographical Magazine, 44, 230-31.

(5) Cunnigham, W. And Counigham, M. A. (2003) : Principles of Environment Science. Tata Megrawhill Publishing Company Ltd., New Delhi.

(6) Drawin, C. (1859) : The Origin of Species, Murray London.

(7) Eribson, S.L. And King, B.J. (1999) : Fundamental a of Environmental Management, Wiley New

(8) Furlay, P. A. and Newey, W.W. (1983) : Man and biosphere. Butterworths. London.

(9) Gleaser, B. (End) (1995) : Concept Policies, Strategies, Pergamon, New York.

(10) Hobbs, J.E. (1980) : Applied Climatology Butterworther London.

(11) Hewitt, K. And Hare, F.K. (1973) : Man and Environment Coneplual Prame Work Commissi College Geography Resovere Paper, 20

(12) Kumar, B . K. (1982) : Kanpur city : A study in Environment Pollution, Tara Book Agency Var

(13) DJum, E. P. (1971) : Fundamentals of Ecology, W. B. Saunder, Philadelphia.

(14) Robinson, D, and Kellow, A. (2001) : Globalization and Environment : Risbs Assessment and W Edward Elger Cheltenham.

(15) Singh, Sabindra (2008) : Environment Geopraphy Prayag Pustak Bhawan, Allahab

(16) Singh, J. And Singh, D.N, (1988) : An Introduction to our Environment E. D. S. C. Varanasi.

(17) Strahler, A. N. and Stahler, A. H. (1976) : Geography and Man's Environment, John Wiley, London.

(18) Tansley, A. G (1935) : The use and abuse of vegetational conepts and terms, Eco Vol. 16. Pp. 284-307.

(19) Warren, A. And Goldsmith, F. B. (1974) : Conservation in Practice, John Wiley, New York.

(20) Zelinsby, W. (1966) : A Prologne Geography, Printice Hall Engle Wood cliffs, Delhi.

Scanned with OKEN Scanner